मोक्ष मंजिल

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

मोक्ष जीवन का अंतिम लक्ष्य है। भारतीय संस्कृति में चार पुरुषार्थ माने गये है– धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। मोक्ष मानव जीवन का अन्तिम लक्ष्य है। मोक्ष की प्राप्ति कैसे हो यह एक बड़ा प्रश्न है। योगी हो या भोगी सभी यह चाहते है कि उनके जीवन का अन्त अच्छा हो। किन्तु अपने–अपने कर्मों के अनुसार सबको फल प्राप्त होता है और कर्मों के अनुसार ही चौरासी लाख जीव योनियों में भटकना पड़ता है। सुख–दुःख जीवन में आने वाले दो पड़ाव हैं। अपने प्रारब्ध के अनुसार या कृत कर्मों के अनुसार सबको सुख–दुःख भोगना पड़ता है। कर्मबन्ध के पांच कारण माने गये हैं– मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग। इन्हीं पांचों को बंध का कारण माना गया है। कषाय और योग को बंध का कारण कहा गया है। मिथ्यादर्शन विपरीत श्रद्धान है। मिथ्यादर्शन के कारण तत्त्वों का यथार्थ श्रद्धान नही होता। जीवादि पदार्थों का श्रद्धान न करना मिथ्या दर्शन है।

विरति का अभाव अविरति है। हिंसा आदि पांच पापों को नहीं छोड़ना या अहिंसादि पांच व्रतों का पालन न करना अविरति है। प्रमाद का अर्थ है उत्कृष्टरूप से आलस्य का होना। क्रोधादि के कारण जीव की सत्कर्मों में रुचि नहीं होती। इसीलिए सकषाय अवस्था को प्रमाद कहा गया है। क्रोध, मान, माया, लोभ आदि आत्मा को कुगति में ले जाने के कारण आत्मा के स्वरूप को कसते हैं, इसलिए इन्हें कषाय कहा जाता है। चारित्र परिणाम के कसने के कारण भी ये कषाय कहलाते हैं। मन, वचन और काय के द्वारा होने वाले आत्मप्रदेशों के परिस्पन्दन को योग कहते हैं। इन्हीं के कारण कर्म आत्मा से बंधते हैं। प्रायः सभी दार्शनिक मिथ्याज्ञान या अविद्या को बन्ध का कारण स्वीकार करते हैं।

भारतीय दर्शन में अनेक दार्शनिक सम्प्रदाय है, जिन्होंने बन्धन का विवेचन किया है। बन्ध होता है, इसे सभी भारतीय दार्शनिक स्वीकार करते हैं। सांख्यदार्शनिक स्वीकार करते हैं कि बन्ध पुरुष या आत्मा का नहीं, बल्कि प्रकृति का होता है। पुरुष न बन्धन ग्रस्त होता है और न

मुक्त ही होता है। जन्ममरणरूप संसार अथवा बन्धन और मोक्ष ये सब धर्म वास्तविक में भोग्य–भोग, भोगसाधन, भोगायतनभूत अनेक पदार्थों की आश्रयस्वरूपा प्रकृति के ही हैं। यह बन्धन क्यों होता है? इस सम्बन्ध में सांख्यकारिका में कहा गया है कि बन्धन का कारण अज्ञान है। योगदर्शन में भी अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश ये पांच क्लेश कहे गये हैं। ये पांचों ही जीवमात्र को संसार चक्र में घुमानेवाले महादुःखदायक हैं। यही बन्धन के कारण हैं। न्यायसूत्र में भी मिथ्याज्ञान को सभी दुःखों का कारण माना गया है। मिथ्याज्ञान ही मोह है। शरीर, इन्द्रिय, मन, वेदना और बुद्धि के अनात्म होने पर भी इनमें 'मैं ही हूं' और ये मेरे हैं ऐसा जो ज्ञान होता है यही मोह है, यही कर्म बन्धन का कारण है।

बौद्धदर्शन में भी अविद्या को बन्धन का कारण माना गया है। चार आर्यसत्यों का अज्ञान ही अविद्या है। अनित्य दुःख और अनात्मभूत जगत में आत्मा को खोजना या सुख को खोजना अविद्या है। अविद्या के कारण ही जन्ममरण का चक्र चलता है। अद्वैतवेदान्त में अविद्या को बन्धन का कारण माना गया है। अविद्या के सम्बन्ध में कहा गया है– संसार के सभी प्राणी अविद्या के वशीभूत रहते हैं, जिससे उन्हें आत्मस्वरूप का ज्ञान ही नहीं हो पाता। अविद्या के कारण आत्मा में अनात्मा का अध्यास होता है, जिससे सच्चिदानन्दस्वरूप आत्मतत्त्व सीमित, कर्त्ता और भोक्ता दिखायी पड़ता है। तमोगुण के प्रभाव के कारण जीव को आत्मा में अनात्मा का मिथ्याज्ञान होता है। विवेक न होने से ही रज्जु में सर्प का मिथ्याज्ञान होता है। ऐसी बुद्धि वालों को ही अनर्थों का समूह घेरता है। अतः असत् को सत् मान लेना ही बन्धन है।

संसार रूपी वृक्ष का बीज अज्ञान है, देहात्मबुद्धि उसका अंकुर है, राग पत्ते हैं, कर्म जल है, शरीर तना है, प्राण शाखाएं हैं, इन्द्रियां उपशाखाएं हैं, विषय पुष्प है और नाना प्रकार के कर्मों से उत्पन्न हुआ दुःख फल है। जीव रूपी पक्षी इसका भोक्ता है। यह अज्ञान जनित बन्धन स्वाभाविक तथा अनादि है। यही जीव के जन्म–मरण, व्याधि और जरा आदि का कारण है। जीव बन्धनग्रस्त इसलिये होता है कि वह आत्मस्वरूप को नहीं पहचान पाता, वह आत्मा से अपने को पृथक् समझता है। जो पापकर्मों से निवृत्त नहीं हुआ है, जिसकी इन्द्रियां शान्त नहीं हैं, जो असमाहित है और जिसका चित्त शान्त नहीं है वह आत्मा को नहीं जान सकता और

आत्मज्ञान के बिना वह बन्धन में ही रहता है। बन्धग्रस्त जीव को आत्मा के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान हो ही नहीं पाता।

सांसारिक कर्मों में लगे हुए मनुष्यों की भोगों में अत्यन्त आसक्ति होती है, इस कारण वे सांसारिक उन्नति के सिवा कल्याण की ओर दृष्टि ही नहीं डाल पाते और परमात्म प्राप्ति के लिये चेष्टा न करके जन्म–मृत्यु के चक्र में फसे रहते हैं और आत्मा के वास्तविक रूप को नहीं जान पाते। काम, क्रोध, मद, लोभ जैसे विकार जब तक मन में रहते हैं तब तक मन शुद्ध नहीं हो पाता। जैसे ही आत्मा के ऊपर से कर्मों का आवरण हटता है आत्मा अपने शुद्ध रूप में अवस्थित हो जाता हैं यही आत्मा की मुक्तावस्था है। मुक्त जीव आत्मा से परमात्मा बन जाता है। उसका स्थान सिद्धशिला है।